अध्याय : 5

दीप्ति खण्डेलवाल के उपन्यासों में परिवर्तित जीवन-मूल्यों की अभिव्यक्ति के विविध आयाम

अध्याय : 5

दीप्ति खण्डेलवाल के उपन्यासों में परिवर्तित जीवन-मूल्यों की अभिव्यक्ति के विविध आयाम

भूमिका

कोई भी साहित्यकार अपनी सम-सामयिक परिस्थितियों से प्रभावित होकर साहित्य का सृजन करता है। लेकिन इस सृजन में उसकी अभिव्यक्ति प्रणाली अलग अलग रूपों में रूपाईत होती है। दीप्ति खण्डेलवाल आठवें दशक के हिन्दी उपन्यासकारों में एक ऐसी सजग महिला उपन्यासकार है, जिन्होंने अपने उपन्यासों में अभिव्यक्ति के विविध आयामों को उजागर किया है, और अपने पाठकों पर अच्छा असल ड़ाल दिया है। दीप्ति खण्डेलवाल के विवेच्य उपन्यासों में परिवर्तित जीवन-मूल्यों का उद्‌घाटन करते समय उन्होंने जिन प्रणालियों को अपनाया है उनका विवेचन-विश्लेषण करना इस अध्याय का प्रमुख प्रतिपाद्य है।

उपन्यासकार और उपन्यास कला

हिन्दी साहित्य की गद्य विधा के अन्तर्गत उपन्यास कला का अपना एक विशिष्ट स्थान निर्माण हो गया है। आधुनिक उपन्यासकारों में महिला लेखिकाओं का योगदान विशेष रहा है। दीप्ति खण्डेलवाल के विवेच्य उपन्यासों में परिवर्तित जीवन-मूल्यों को अभिव्यक्ति के विविध आयाम दृष्टिगोचर होते हैं। आधुनिक काल में विशेषतया जीवन-मूल्यों का परिवर्तन उभर आया है। अतः दीप्तिजी भी इन परिविर्तत जीवन-मूल्यों से सूक्ष्मता के साथ जुड़ी नजर आती हैं। उनके विवेच्य उपन्यासों में नारी मन की तहों तक पहुँचने की छटपटाहट दिखाई देती है। संवेदनशील दृष्टि को लेकर कथावस्तु का जाल बुनने का प्रयास लेखिका ने किया है। परिवर्तित जीवन-मूल्य की दृष्टि से दाम्पत्य सम्बन्धों में परिवर्तन स्पष्ट करते वक्त लेखिका

ने भिन्न-भिन्न कोनों और आयामों को प्रस्तुत किया है, जिससे अभिव्यक्ति की विभिन्न प्रणालियाँ सहज दिखाई देती है।

उपन्यास लेखन की विविध प्रणालियाँ

उपन्यास लेखन की विविध प्रणालियाँ हैं। डॉ॰वर्माजी का कहना है कि, "साहित्य जब काव्यक्षेत्र से गद्य क्षेत्र में आता है, तो उसे अपने प्रकाशन में भी शैलियों की अपेक्षा होती है, गद्य शैली में प्रायः चार कोटियाँ निर्धारित की जाती हैं।

1· इतिवृत्तात्मक

2· विश्लेषणात्मक

3· विवेचनात्मक

4· कलात्मक।"[1]

इतिवृत्तात्मक प्रणाली में केवल वस्तुस्थिति के निरूपण को प्रयुक्त किया जाता है, उसमें भावना और कल्पना को कोई स्थान नहीं रहता। विश्लेषणात्मक शैली में सामाजिक या राजनीतिक प्रसंग में विवेक बुद्धि की प्रधानता रहती है। कथा आरम्भ से अंत तक विषय अनुरूप चलते हैं। जैसे जाति, स्वभाव, गुण, महत्ता। विवेचनात्मक शैली में गुणदोषों की परख की जाती है और समस्याओं का हाल पस्तुत किया जाता है। कलात्मक शैली भावना और कल्पना के माध्यम से सौन्दर्य के विविध पार्श्व प्रकट किये जाते हैं। उपन्यास लेखन में शैली तत्व, उद्देश्य और आशय के सन्दर्भ में भी विभिन्न प्रणालियाँ स्पष्ट की जाती हैं। शैली के आधार पर ऐतिहासिक नाटकी, आत्मकथात्मक, पत्रात्मक और ड़ायरी परक शैलियों का समावेश रहता हैं। तो तत्वों के आधार पर कथानक प्रधान, चरित्र प्रधान, देशकाल प्रधान प्रणाली को अपनाया जाता है। उद्देश्य के आधार पर आदर्शवादी, यथार्थवादी, अति यथार्थवादी और अति आदर्शवादी प्रणालियाँ प्राप्त होती हैं, तो आशय के आधार पर लघु और दीर्घ उपन्यास प्रणाली अपनायी जाती है। अभिव्यक्ति के विविध आयामों में शैली तत्व को विशेष महत्व दिया जाता है। अध्ययन की सुलभता के लिए इसके दो

पक्ष किये जाते हैं - 1· रूपविधान पक्ष, 2· भाषा पक्ष। रूपविधान पक्ष के अन्तर्गत वर्णनात्मक, विश्लेषणात्मक, आत्मकथात्मक, संवादात्मक, पत्रात्मक, काव्यात्मक, मनोविश्लेषणात्मक आदि प्रणालियाँ आती हैं। तो भाषा पक्ष के अन्तर्गत भाषा के गुण, भाषा की शक्ति, संवाद आदि प्रणालियाँ आती हैं।

1· **वर्णनात्मक प्रणाली**

वर्णनात्मक प्रणाली में उपन्यासकार अपने उपन्यासों में घटना, प्रसंग और कथावस्तु को वर्णनात्मक प्रणाली में समझाता है। स्थान-स्थान पर बौद्धिक विवेचन भावात्मक वर्णन और विश्लेषण आदि को भी यहाँ स्थान मिलता है। विवेच्य उपन्यासों में रूप-वर्णन के चित्रण के लिए इस प्रणाली का प्रयोग किया है।

"प्रिया" उपन्यास के नाना अपनी नातिन के सामने अपनी पत्नी का अर्थात प्रिया की नानी का वर्णन करते हुए कहते हैं कि, "जानती है प्रिया, तेरी नानी कैसी थी···? बिल्कुल तेरी जैसी, ऐसी ही कान तक खिंची भोली मृगी-सी आँखे, ऐसी ही स्याह, रेशमी कमर के नीचे तक झूलते केश, ऐसी ही निर्दोष मुसकान···। बस, तू गोरी है तेरी नानी सांवली थी। ऐसा स्निग्ध सांवला मोहक रंग भी फिर नहीं देखा कि गोराई शरमा जाय।"[2]

"कोहरे" उपन्यास के सुनील सिमी के सौन्दर्य की अभ्यर्थना करते हुए कहते हैं कि "इन तुम्हारे केशों के जादू को ऐसे ही बिखर जाने दे। प्रिया के रूप सौन्दर्य का वर्णन लेखिकी ने इसप्रकार किया है - "नीली चोली से झाँकता गोरा वक्ष, नाजुक ग्रीवा, मृणाल बाहें···। प्रिया अधिक नीची काट की चोली नहीं पहनती। फिर भी वक्ष की शुभ्रता झलक-झलक जाती है। प्रिया अंगप्रदर्शन का प्रयास भी नहीं करती, फिर भी छवि बिखर-बिखर जाती है।"[3]

"कोहरे" उपन्यास के सुनील सिमी के सौन्दर्य की अभ्यर्थना करते हुए कहते हैं कि, "इन्हें, इन तुम्हारे केशों के जादू को ऐसे ही बिखर जाने दो सिमी आज। इन्हें बाँधो मत। जानती हो तुम्हारे इसी अलग-पाश ने मुझे बाँध लिया है···कितनी अच्छी लगती हो तुम इन घुंघराले रेशमी बालों के बीच···इन बाइल्ड

आइज की पलके उठाती-गिराती।"[4]

"प्रतिध्वनियाँ" उपन्यास में भी रूप-सौन्दर्य का वर्णन करते वक्त वर्णनात्मक प्रणाली का प्रयोग किया गया है, "फूलों-सा यह नैसर्गिक आकर्षण तो शुभ्रा में था, जिसकी कमल पंखुड़ियों-सी आँखे मुझे उस नीली मानसरोवर झील की याद दिला देती, जहाँ मानसरोवर के गहरे नीले जल में शुभ्र कमल खिलते हो···। शुभ्रा की चितवन में शुभ्र कमलों की उज्वलता थी, स्निग्ध गौर वर्ण में चांदनी का सम्मोहन।"[5]

लेखिका ने वातावरण के चित्रण बौद्धिक विवेचन और भावात्मक वर्णन में भी वर्णनात्मक प्रणाली को अपनाया है।

2· **मनोवैज्ञानिक प्रणाली**

आधुनिक उपन्यासों के लेखन की यह एक विशेष प्रणाली है। इस प्रणाली में विवेच्य उपन्यासों का लेखन किया गया है। मानव मन की अनेक भंगिमाओं, परिवेश तथा आधुनिक भावबोध को पहचानकर सक्षमता से रूपायित करने का प्रयास किया है। लेखिका ने वर्तमान जटिल परिस्थितियों तथा तेजी से बदलते परिवेश को यथार्थता से बोध कर और पश्चिम के अध्यतन जीवन दर्शन को प्रस्तुत करने के लिए इस प्रणाली का प्रयोग किया है। पात्रों के मनोविज्ञान का अध्ययन कर उनकी वृत्ति के अनुरूप उनकी अभिव्यक्ति की गई है। व्यक्तित्व बोध, युगबोध, भावबोध, संघर्ष और विद्रोह का आग्रह, परम्परागत मूल्य वादी दृष्टि के स्थान पर अनास्था एवं मूल्य हीनता का स्वर, घिसी-पीटी चिकनी भाषा के स्थान पर प्रसंगवत कगोरी भाषा का प्रयोग इस प्रणाली में किया गया है। पात्रों के द्वन्द मानसिक अवस्था, विचारधारा आदि को प्रस्तुत करने के लिए मनोवैज्ञानिक प्रणाली ही सक्षम होती है। आधुनिक जीवन में व्यक्ति का असहाय, निरर्थक, फालतु और असंगत बनाने वाला बाह्य परिवेश आंतरिक संघर्ष तथा व्यक्ति और व्यक्ति के बीच के संघर्ष का चित्रण विवेच्य उपन्यासों में चित्रित किया गया है।

"प्रिया" उपन्यास की प्रिया अपने जीवन में प्रियत्व प्राप्त करना चाहती है, पर प्रियत्व के स्थान पर उसे यथार्थ में केवल मानसिक यंत्रणाएँ ही मिलती

हैं। जिसकी वजह से पूरे उपन्यास में मनोवैज्ञानिक प्रणाली को स्थान दिया गया है। प्रिया मन-ही-मन सोचती है कि, "बाबा, माँ, चित्रा दीदी और वह स्वयं···फिर बाबा के नेपथ्य में नानी, माँ के अप्रकट में उसके पिता···। चित्रा की आँखों के सपने, उसकी स्वयं की आँखों में बिम्बित-प्रतिबिम्बित पल-पल बदलते ये आंसू और मुस्कराहटों के ये रंग···सबको किसी तृप्ति की, किसी सुख की तलाश रहती है, रही है, रहा करती है···किन्तु कदाचित तृप्ति एक "मरीचिका" है, सुख एक "भ्रम"···कभी लक्ष्य स्पष्ट नहीं होता, कभी कदम भटक जाते हैं···। कभी-कभी लक्ष्य भी स्पष्ट होता है, कदम भी नहीं भटकते···फिर भी कामनाओं का क्षितिज, क्षितिज ही बना रहता है···निकट भी, दूर भी। माँ मरीचिका के पीछे दौडी थी, चित्रा दीदी के कदम बहक गए, और उसे तो केवल क्षितिज मिला है।"[6]

"कोहरे" उपन्यास के मेजर सिनहा का पत्नी बरसो झेली यंत्रणाओं को बेटी के सम्मुख उजागर करते हुए कहती है कि - "तो आज समझ भी ले सिमी। मेरी भी बोस सुन ले कि मैं कुछ हल्की हो जाऊं···नहीं तो मैं घुट जाऊंगी···बेटी··· घुट जाऊंगी।"[7]

"कोहरे" उपन्यास की सिमी अपने पति के सानिध्य की प्रथम अनुभूति को स्पष्ट करते हुए कहती है कि, "प्रथम अनुभूतियाँ बिलकुल शेर से खेलने-जैसी समांचक थी···आज वे ही अनुभूतियाँ छत पर उलटी चलती छिपकली को देखकर उसके अपने उपर गिर पड़ने के भय से रोमांचित कर जाती है···एक कुरूप, जुगुप्सित भय से सर्वांग सिहर उठता है···कितना अन्तर आ चुका है इन सिहरनों में···।"[8] सिमी का अंतस संघर्ष पूरे उपन्यास में यत्र-तत्र दिखाई देता है। पति के आरोपों से आहत हुई सिमी का मनोवैज्ञानिक चित्रण देखिए - "मेरे भीतर भी लू के झोंके चल रहे थे···शोले भडक रहे थे···और मैं आग से आग को बुझाने निकल पड़ी थी···कभी-कभी कोई यातना, इतनी कठिन हो उठती है, कोई दर्द इतना असहय कि "आत्मघात" कर लेने की चरम यातना, चरम दर्द में डूब जाने को जी चाहने लगता है···तिल-तिल जलने से धधकती लपटों में ही समा जाने को प्राण आतुर हो उठते हैं···। हां, एक नारी-देह से अधिक, एक नारी मन, नारी प्राणों ने मेरा जीना मुश्किल कर दिया था···काश! मैं सिमता न होकर सुनिल होती···।"[9]

"प्रतिध्वनियाँ" उपन्यास के मेजर नीलकान्त मेहता के जीवन की छपटपटाहट को प्रस्तुत करते वक्त मनोविज्ञान का सहारा लिया गया है। नीलकान्त मन-ही-मन सोचते हैं, "उस महानगरी से बहुत दूर, जहाँ के कोलाहल के बीच मैं पागल हो उठा था···जहाँ के रेशमी पाश भी मुझे नागपाश प्रतीत होने लगे थे···जहां भीड की करताल ध्वनि मुझे बहरा बनाने लगी थी···जहाँ और कंठों की इतनी आवाजें थी कि मैं मेरी अपनी आवाज का दम घुटने लगा था···जहां मुझे समर्पित पुष्पहारों का बोझ ही इतना अधिक हो उठा था कि मेरी ग्रीवा टूटने लगी थी··· सोने-चांदी में ही नहीं, फूलों में भी बोझ होता है।"[10]

खण्डित व्यक्तित्व प्रणाली

विवेच्य उपन्यासों में खण्डित व्यक्तित्त प्रणाली का अंकन किया गया है। आज का मानव टूटा हुआ है, चाहे नारी हो या पुरूष, उसके जीवन कहीं ना कहीं उसे ऐसी ठेंस पहुँची है कि जिससे उसका व्यक्तित्व विभाजित हो जाता है।

"प्रिया" उपन्यास की प्रिया शिक्षित नारी है। दिखने में अत्यन्त सुन्दर और आकर्षक प्रिया देवदास नामक युवक को चाहने लगती है। परन्तु उसकी माँ उसके प्रेम में अवरोध निर्माण करती है। तत्पश्चात उसके पिता उसका विवाह अरूण आहुजा नामक धनवान के साथ करने का निश्चय करते हैं और सगाई के उपरान्त के पहले प्रिया सोचती है कि "माँ, बाबा, देवदास - उसकी आँखों के इंद्रजाल में उन पराजित सच्चाइयों - जैसे कौंध रहे थे···जो सचमुच निर्दोष, विवश "सच" थे···। किन्तु उन निर्दोष विवश "सचों" के साथ जीना शायद दुश्वार था···ऐसे ही "सचों" ने माँ को खण्ड-खण्ड कर ड़ाला है···बाबा को शूल-शय्य दी है···प्रिया को भी जहर के घूंट दिए हैं··। सबसे अधिक अपनी उसी अभागन माँ की खातिर प्रिया ने झूठ के इन्द्रजाल को स्वीकार कर लिया था···करने का प्रयास कर रही थी····। उसे लग रहा था, जैसे सोने के नहीं, कहीं अधिक मूल्य पर रत्नजडित पिंजरे में, उसके अस्तित्व को कैद किये जा रहा है···अब शायद···चुगने को मोती मिलेंगे···। किन्तु, क्या उन मोतियों को चुगती प्रिया "जी" पाएगी···?"[11] रत्नजटित पिंजडे से तो मुक्ति मिली, परन्तु उसके रेशमी पंख क्षत-विक्षत हो गये। आगे चलकर मनसिज उसके जीवन में आता है और उसके साथ विवाह करना चाहता

है - "अच्छा दीदी···माना···शादी···कर लूंगी···तुम केवल इतना बता दो···कौन सा ब्याह करूँ - बाबा वाला, माँ वाला या तुम्हारा वाला ? या इतना ही बता दो, कैसा प्यार करूँ··देवदास जैसा···अरूण आहुजा जैसा···या मनसिज जैसा···?"[12] "प्रिया" उपन्यास की प्रिया, सौदामिनी, रविशंकर, चित्रा आदि सभी पात्र खण्डित व्यक्तित्व का चित्रण प्राप्त होता है।

"कोहरे" उपन्यास में भी सिमी के खण्डित व्यक्तित्व का चित्रण प्राप्त होता हे। पति सुनील के निरंकुश आचरण से तंग आकर वह सुनील का घर छोड़कर पापा के घर चली आती हे और सुनील से तलाक लेना चाहती है। एक समाचार पत्र में नया डायव्हर्स बिल पास हो गया है, यह खबर जब पापा उसे सुनाते हैं तब उसे लगता है कि - "कैसे जिन्दगी की धड़कनें, जीवन के स्पन्दन सम्बन्धों के सांसों से गुंथे पाश···अखबार की न्यूज बनकर रह जाते हैं···। अखबारों में आये दिन प्रेम से सम्बन्धित चर्चाओं को प्रमुखता दी जाती हे, चाहे फिर वह लड़की भगा ले जाना हो, चाहे प्रेमिका की हत्या हो···। मुझे लगा है, मेरी भी हत्या हो गयी है···या मैंने स्वयं आत्महत्या कर ली है···। "हत्या या आत्महत्या" मैं स्तब्ध, अवाक, अपने आपसे पूछ रही हूँ···जिन्दगी के ढेर सारे अहसास, जैसे सिर्फ एक मौत के अहसास में डूब गए हैं···जीवन की सारी बोधमयता को एक मृत्युबोध ने जेसे किसी विषधर-सा डंस लिया है···मुझे लग रहा है मेरी शिराओं के रक्त में विष घुलने लगा है···मैं नीली पडने लगी हूँ मैं मरने लगी हूँ।"[13] इसी उपन्यास की श्यामा, मेजर सिन्हा, निशीथ आदि पात्रों के व्यक्तितव भी खण्डित व्यक्तित्व है।

"प्रतिध्वनियाँ" उपन्यास के नीलकान्त मेहता का व्यक्तित्व खण्डित है। शहर के सबसें प्रतिष्ठित आदमी होते हुए भी, उनका जीवन प्रेमहीन जीवन रहा है। शुभ्रा पटेल के साथ प्रेम सम्बन्ध स्थापित किये थे, परंतु अर्थाभाव के कारण तोड़ डाले। अर्थ प्राप्ति के लिए अचला के साथ विवाह किया, परंतु केवल पैसा ही मिला, प्रेम नहीं। तत्पश्चात जया को अपनाया, पर उसे भी गांव जाना पड़ा।

तद्उपरान्त मोतीबाई को अपनाना चाहा पर वह भी उनकी बातों में नहीं आयी। अतः अपनी ही करनी के कारण उनका व्यक्तित्व खण्डित हो जाता है और वे केवल सफलता के पीछे दौडकर अपने जीवन के अभाव को भर देना चाहते हैं। परंतु अंत तक बाह्य रूप से सफल आदमी होते हुए भी अंतस से टूटे हुए आदमी के रूप में दिखाई देते हैं। वे सोचते हैं - "जिन्दगी क्या होती है ? ···मानव अस्तित्व क्या होते हैं ?···सम्बन्ध क्या होते हैं ?···यह सब चक्र है या चक्रव्युह, जिसमें फंसकर जाने कितने अभिमन्यु-वध होते···?"[14] इसी उपन्यास की अचला, शुभ्रा पटेल आदि पात्रों का खण्डित व्यक्तित्व चित्रण भी प्राप्त होता है।

आत्मकथनात्मक प्रणाली

विवेच्य उपन्यासों में आत्मकथनात्मक प्रणाली का भी प्रयोग किया है।

"प्रिया" उपन्यास में प्रिया अपने बाबा को कहती है - "तो बाबा चलो, आज अपनी कहानी सुना ही डालो। कहानी अधूरी मत छोडो। तुमने न जाने कितनी कहानियाँ मुझे सुनाई हैं पूरी-पूरी···बस···अपनी कहानी अधूरी छोड़-छोड देते हो।"[15] प्रस्तुत उपन्यास में बाबा, सौदामिनी, चित्रा क्रमशः अपनी आप बीती सुनाते हैं और प्रिया के जीवन के संदर्भ में उसका समन्वय होता है जिससे उपन्यास लेखन में एक सूत्रता आती है।

"कोहरे" उपन्यास के अन्तर्गत बीच-बीच में पात्र आत्मकथन करते दिखाई देते हैं। सिमी का आत्मकथन देखिए - "मेरे भीतर की स्वाभिमानी नारी ने अपने ही हाथों अपने आंसू पोंछ लिए हैं - मैं सूखी आँखों से जिन्दगी की सच्चाइयों का सामना करने के लिए सन्नद्ध हो उठी हूँ - प्रतिवाद में किसी भी सिमा तक सुनील पर प्रत्याक्रमण के लिए भी···। आह! किन्तु शस्त्र मेरे हाथ से छूट जाते हैं - मेरा साहस टूट-टूट जाता है - ओठों को लाख कसूं, निःश्वासों का जहर पीती रहूँ, किन्तु आँखें नम हो ही आती है।"[16]

"प्रतिध्वनियाँ" उपन्यास का नीलकान्त भी अपनी जीवन की सच्चाई आत्मकथनात्मक प्रणाली में स्पष्ट करता है - "बलराम की हत्या से लेकर अचला के आत्मघात तक को अनदेखा कर दिया···। शुभ्रा से लेकर रागिनी तक फूलों जैसे अस्तित्व को अपने यश और वैभव की तुला पर तोला··। माँ से लेकर बेटी तक यानी कि अचला से लेकर रागिनी तक का सौदा किया···और प्रत्यक्ष में, मैंने कहा न, मैं कभी हारा भी नहीं। किन्तु···क्या इन क्षणों में स्वयं को अनदेखा या अनसुना कर पा रहा हूँ।"[17]

कथोपकथन प्रणाली

संवाद उपन्यास को अधिक जीवित और सरल बना देते हैं। दो पात्रों के बीच हुए विविध प्रकार के संवादों से पात्रों के मनोभाव तथा कथावस्तु पर अधिक प्रकाश पडता है। विवेच्य उपन्यासों में अनेक प्रकार के कथोपकथनों का दर्शन होता है।

"पिया" उपन्यास में पिया और देवदास, पिया और बाबा, पिया और मनसिज, चित्रा और सौदामिनी, बाबा और सौदामिनी के तथा "कोहरे" उपन्यास के सिमी और सुनील, मेजन सिनहा और श्यामा, श्यामा और सिमी, निशीथ और पापा, "प्रतिध्वनियाँ" उपन्यास के नीलकान्त और शुभ्रा पटेल, नीलकान्त और अचला, नीलकान्त और जया, नीलकान्त और भीमसिंह, नीलकान्त और मोतीबाई आदि के कथोपकथन में नाटकीय, मनोवैज्ञानिक, तार्किक और खण्डित कथोपकथन प्रणाली को अपनाया गया है।

1· **नाटकीय कथोपकथन प्रणाली**

"पिया" उपन्यास की पिया अपनी माँ को कहती है - "क्या सुन रही हो माँ, मेरी धडकने···? बिलकुल नार्मल हूँ। सेंट परसेंट जीवित। और बहुत खुश।"[18]

"कोहरे" उपन्यास की सिमी और सुनील का संवाद - "क्यों तबीयत तो ठीक है ? क्या बात है डियर, बोलो। सुनील न्यूज पढ़ रहे थे।

"मेरी तरफ ठीक से देखो एक बार।" मैंने कहा।

सुनील हंस पडे - "एक बार क्यों, बार-बार देखेंगे। आप कहेगी तो आज कालेज भी नहीं जाएंगे···।"[19]

"प्रतिध्वनियाँ" उपन्यास की रागिनी अपने पापा से कहती है - "न पापा, ऐसा मत कीजिए प्लीज···मैं नहीं सह सकूंगी। यह विवाह नहीं सौदा है, जो आप मेरा कर रहे है। मेरा सुख चाहते हैं तो मुझे उसे ही अपनाने दीजिए, जो आपकी सम्पत्ति को नहीं, मुझे, सिर्फ मुझे चाहता है···।" "बहुत देखे ऐसे चाहनेवाले। यह लैला-मजनू का पागलपन छोडकर होश में आओ रागी।"[20]

2· **मनोवैज्ञानिक कथोप-कथन प्रणाली**

मनोवैज्ञानिक कथोप-कथन प्रणाली में पात्र अपनी मानसिक अवस्था का प्रदर्शन या मनोविज्ञान को अपने संवाद के माध्यम से प्रकट करते हैं, तब इस प्रकार के संवाद मनोवैज्ञानिक बन जाते हैं।

"प्रिया" उपन्यास की प्रिया और देवदास का संवाद - "आपको···तुम्हें वह किताब मिल गई न।" देवदास के ओंठ कांप रहे थे।

"क्यों, तुमने स्वयं ही दी थी, फिर कैसे न मिलती ?" प्रिया ने उन काँपते ओठों को देखते अपने ओंठ कस लिये थे।

"नहीं···मेरा मतलब है···तुम्हें···तुम्हें उस पुस्तक में और कुछ नहीं मिला ?"[21]

"कोहरे" उपन्यास की सिमी और सुनील के संवाद देखिए - "मैं पूछ रही हूँ, इसमें बुराई क्या है ?" मैंने प्रतिवाद के स्वर में कहा।

"सिमी! यदि यही सवाल तुमने तीसरी बार पूछा तो मैं, आज की रात भी देर से आऊँगा···फिर शायद हर रात···" सुनील का मुख तम-तमाने लगा था···आँखों में शोले भड़क उठे थे। उन शोलों की आँच मुझे दग्ध करने लगी थी···

"लेकिन तुम तो मेरी "इन्डिविजुएलिटी" को कायम रखना चाहते थे न।···तुम्हीं ने तो कहा था कि मेरे "अस्तित्व" को जीने दोगे ? वह सब क्या था ? ऐसे तो···ऐसे तो मैं घुट जाऊँगी···"[22]

"प्रतिध्वनियाँ" उपन्यास के पापा और रागिनी के संवाद देखिए - "पापा! पापा! मैं जी नहीं सकूंगी।" सिसकती रागिनी कह रही थी···वे मेरे अपने रक्त की सिसकियाँ थी। एक बार फिर एक ओर रागिनी के रूप में मेरा "स्वयं" था, दूसरी ओर मेरा "स्व" अर्थात एक ओर मेरे सूक्ष्म स्पन्दन थे, दूसरी ओर मेरा स्थूल अस्तित्व।"[23]

3· तार्किक कथोप-कथन प्रणाली

किसी घटनाएँ या चीज को लेकर पात्र अपना तर्क पेश करता है, या अगर, मगर भाषा का प्रयोग करता है, तब तार्किक कथोप-कथन प्रणाली कहते हैं।

"प्रिया" उपन्यास की प्रिया अपनी बहन को कहती है - "अरे, उत्तर तुम क्या दोगी, कोई उत्तर कहीं हो भी···माँ···तुम या मैं···हम केवल प्रश्नचिन्ह ही बन सकती हैं, बनती रही है···नारी की नियति केवल एक चिरन्तन प्रश्नचिह्न है···जिसका कोई निश्चित उत्तर न कभी मिला है···न मिलेगा···फिर क्यों करूँ ब्याह···?"[24]

"कोहरे" उपन्यास की सिमी सोचती है - "किन्तु लगता है मैं "कामायनी" की श्रद्धा नहीं, इडा हूँ···भावना नहीं, प्रज्ञा हूँ। मात्र स्पंदनमयी नहीं तर्कमयी भी···मात्र समर्पित नहीं अधिकारमयी भी।"[25]

"प्रतिध्वनियाँ" उपन्यास की गंगा कहती है - "दूसरे जनम में मैं चिड़िया बनूंगी रे नीलू। आसमान में उड़ती, फिरती, गाती चिडियाँ···।"[26]

4· **पत्रात्मक प्रणाली**

जब उपन्यास लेखन में कई पात्रों के माध्यम से कहानी की सृष्टि की जाती है, तब वह उपन्यास, पत्रात्मक प्रणाली में लिखा हुआ उपन्यास कहलाया जा सकता है। कुछ उपन्यासों में पत्रों का सहारा लेकर कथा को आगे बढाया जाता है। विवेच्य उपन्यासों में पत्रात्मक शैली का भी प्रयोग किया गया है।

"प्रिया" उपन्यास के नेता यशवंत के द्वारा सौदामिनी को भेजा गया पत्र देखिए - "सौदामिनी परसो श्याम को कार भेजूँगा···शेष मैं देख लूँगा··यशवंत"[27]

"मुझे अफसोस है, अरूण दगाबाज निकला।···बस, अब और तंग मत करना।"[28]

"कोहरे" उपन्यास का सुनील सिसी को पत्र लिखता है "माय डियर सिमी·····

····योर्स ऐज एवर - सुनील।"[29]

"प्रतिध्वनियाँ" उपन्यास के नीलकान्त के काका हरिद्वार आश्रम से नीलकान्त को खत भेजते हैं - "नीलकान्त। शायद मेरा अन्तिम समय आ गया है···लेकिन बस, एक बार तुझे देखने की इच्छा है इन आँखों से, जो अब सदा के लिए मुंदना ही चाहती हैं····।

नीलू, आएगा न बेटे ।

·····तेरा काका"[30]

5· **काव्यात्मक प्रणाली**

विवेच्य उपन्यासों में बीच-बीच में काव्यात्मकता आयी है।

"प्रिया" उपन्यास के बाबा की कविता देखिए -

"मत समझो ओ बिटिया मेरी,
कि मैं हो चुका बुड़ढा या लाचार।
दाहिना हाथ बेकार सही, पर बाएं से
अब भी जड़ सकता हूँ थप्पड़ दो-चार।"[31]

"यह कैसी उजली धूप खिली
या शरद चांदनी शरमाई।
या बिखर गए फूल ही फूल
जो मेरी नातिन मुसकाई।"[32]

"अनजान सफर, अन्धी राहें, मंजिल का पता मालूम नहीं,
आंखों में चांद-सितारे हैं, दुनिया का पता मालूम नहीं।"[33]

"कोहरे" उपन्यास में भी काव्यात्मक प्रणाली का प्रयोग किया गया है। जैसे - "जित बिलोक मृग शावक नैंनी, तनु तिह बरस कमल सित श्रेनी, अर्थात मृग शावक जैसी सुन्दर आंखों वाली सीता की दृष्टि जिस ओर उठती है, उस ओर उजले कमलों की कतार बरस जाती है।"[34]

"मन का खरगोश मुग्ध, शुभ्र शरद बादल-सा"[35]

"प्रतिध्वनियाँ" उपन्यास में भी काव्यात्मक प्रणाली का प्रयोग किया गया है -

"मेरे तो गिरधर गुपाल दूसरा न कोई..."[36]

"फुलगेंदवा ना मारो, न मारो...गलत करेजवा में चोट..."[37]

"हेरी मैं तो दरद दिवानी, मेरा दरद न जाने कोय।"[38]

"भूखे भजन न होइ गुपाल।"[39]

शैलिगत तत्व के समूचित नियोजन के लिए कतिपय गुणों का होना अवश्य होता है। सामान्य रूप से शैली में प्रतिकात्मकता, रोचकता, भावात्मकता, आंचलिकता और व्यंग्यात्मकता आदि गुणों का समावेश कलात्मक परिपूर्णतः प्रदान करता है।

1· **प्रतिकात्मकता**

"पिया" उपन्यास में प्रतिकात्मकता का प्रयोग किया गया है। सौदामिनी का नाम और पिया का नाम प्रतिकात्मक ही है - "जाने किस घडी, क्यों, उन्होंने मुझे सौदामिनी नाम दिया···? किन्तु क्या विद्युत की कडवाहट को सुनने वाले उस छटपटाहट को समझ सकते हैं, जो उसका वक्ष चीरकर एक चीत्कार बनकर गगन के आर-पार गूंज उठती है···? आकाश से धरती पर गिर पडती है, धरती का वक्ष चीरकर उसमें समा जाती है, किसी सीता जैसी। लोग कहते हैं - बिजली गिरी है। मैं कहती हूं, शायद विद्युत ने आत्मघात किया है···।"[40]

"कोहरे" उपन्यास में भी प्रतिकात्मक शैली का प्रयोग मिलता है। सिमी अपने पति सुनील से कहती है - "इस रात के उपलक्ष्य में मुझे खरगोशों का एक जोड़ा ला दो।···एक "कप्ल" यानी कि वह जोडा हमारा "सिम्बोलिक" होगा, हमारे प्यार का, साहचर्य का, प्रणय का, परिणय का···।"[41]

2· **भावात्मकता**

"पिया" उपन्यास की पिया डा· मनसिज को कहती है - "थोड़ी देर और रूको मन···दिन को डूब जाने दो···देखो, दिन के सुनहरे रंग इस तालाब के पानी में कैसे डूबे जा रहे हैं···। धीरे धीरे सारे रंग डूब जायेंगे, और पानी भी रात की स्याही जैसा काला पड़ जायगा···"[42]

3· **व्यंग्यात्मकता**

विवेच्य उपन्यासों में बीच-बीच में व्यंग्यात्मकता भी झलकती है।

"पिया" उपन्यास की पिया जब पिता द्वारा तय किये गये वर के साथ विवाहपूर्व ही आठ दिन तक रहती है और उससे ठोकर खाती है, तब वह अपनी

अंतस की भड़ास व्यंग्य बातों से निकलती है। वह अपनी माँ को कहती है - "शादी यहाँ होगी, हनीमून लन्दन या न्यूयार्क में···अब तो खुश हो मां, बोलती क्यों नहीं ?"[43]

"प्रिया" उपन्यास में चित्रित नेता यशवंत के जीवन की पोल खोलने का प्रयास उसकी प्रथम पत्नी ही करती है। अपनी छोटी सौत सौदामिनी को वह कहती है " ओ रे मेरी सबसे छोटी सौत, तो मेरे नाग ने तुझे भी डंस लिया···! चल, अब तू भी मरेगी, धीरे-धीरे तुझे शरबत में घोल-घोल कर जहर पिलाया जाएगा. ···तू नीली पड़ती जाएगी···मेरा और अब तेरा भी ये खसम फिर तुझे भी जीते-जी मारकर किसी और को डंसने बढ़ जाएगा···अरी, पूरा काला नाग है ये! इसके डंसे को कोई मंत्र भी नहीं बचा सकता।"[44]

"कोहरे" उपन्यास का सुनील अपनी पत्नी सिमी को कहता है, "लेकिन. देखिए मेरी कबुतरी जी, आप कविता लिखेगी तो सिफ मेरे लिए····"[45] "मैं तो दुलरियाँ हूँ ही। काश, तुम मंगल धोबी हो सकते।"[46] "खूब मेजर हो जी तुम भी। बड़े बहादुर बनते थे।"[47]

4· आँचलिकता

विवेच्य उपन्यासों में आँचलिक भाषा का प्रयोग भी दिखाई देता है।

"कोहरे" उपन्यास का शिवदीन आँचलिक भाषा का प्रयोग करता है - "बस यही गलती तो होय गई आपसे···आपका भैया की इजाजत के बगैर गावै का नाहीं रहा। अब देखो सरकार बहादुर का-का तमाशा करत है···?"[48]

"प्रतिध्वनियाँ" उपन्यास में भीमसिंह द्वारा आँचलिक भाषा का प्रयोग किया गया है - "मुदा, आप इत्ती-सी बात का गम ना करो···आपने तो बहुत बचावा चाहा ओह का···परन्तु ईसुर की मरजी के आगे कोऊ का बस नाही चलत। अब तो आप ऊका भूलई जावैं तो अच्छा मालिक। नहिन तो···"[49]

पूर्व दीप्ति शैली

विवेच्य उपन्यासों में पूर्व दीप्ति शैली का प्रयोग किया गया है। "प्रिया" उपन्यास के प्रारम्भ में ही ध्यान मग्न प्रिया का चौंकना यह सूचित करता है। प्रिया के नाना भी अपनी जीवन की कथा प्रिया को बार-बार सुनाई करते थे।[51] "कोहरे" उपन्यास में भी इसी शैली का प्रयोग दिखाई देता है।[52] "प्रतिध्वनियाँ" उपन्यास में भी इसी शैली का प्रयोग किया गया है।[53]

शब्द-सौष्ठव

विवेच्य उपन्यासों में शब्दों का सुन्दर प्रयोग किया है। संस्कृत अंग्रेजी शब्दों के साथ वाक्यों का भी इनमें प्रयोग प्राप्त होता है।

परिष्कृत शब्दावली

परिष्कृत शब्दावली के साथ-साथ तत्सम, मिश्र और लोकभाषा शब्दावली भी पायी जाती है। परिष्कृत शब्दावली के अन्तर्गत "प्रिया" और "प्रतिध्वनियाँ" उपन्यास में निम्न शब्द पाये जाते हैं। आत्मीयता, सौन्दर्य-चेतना, आत्मसमर्पण, प्रतिध्वनियाँ आदि शब्द मिलते हैं। उत्सुकता, अस्तित्व, कामना, तिरस्कृत, विरक्त, वितृष्णा, परिभाषा, सार्थकता, प्रतिक्षा, प्रतिरोध, प्रतिशोध आदि ऐसे शब्द हैं जो जीवन में अंतरंग स्थान ले चुके है। इन शब्दों का प्रयोग मनस्थिओं के अनुरूप सहजता से किया गया है।

संस्कृत शब्दावली

"नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावक।"[54]

अंग्रेजी शब्दावली

विवेच्य उपन्यासों में अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग प्रचुर मात्रा में मिलती है। कभी-कभी तो पात्र पूरा वाक्य अंग्रेजी में बोलते नज़र आते हैं। "एनॉटमी, वीमेन स्पेशालिस्ट, युटरस, ऐक्जाम, ऑपरेशन, ड़िसटिंक्शन, मशीन"[55], "लेडि-किलरद यू नाटी"[56]

"कोहरे" उपन्यास में अंग्रेजी वाक्यों का प्रयोग अधिक मात्रा में किया गया है "ब्यूटी लाइज नाट ओनली इन द थिम्स, बट इन द आइज द बिहोल्डर टू।"[57]

"प्रतिध्वनियाँ" उपन्यास में भी बीच-बीच में पूरा का पूरा वाक्य अंग्रेजी में प्रयुक्त किया गया है - "यू आर ए वन्डरफुल पर्सन।"[58]

कहावतें, मुहावरे इ.

लेखिका ने अपने उपन्यासों में परिवर्तित जीवन-मूल्यों को अभिव्यक्त करते समय विविध कहावतों और मुहावरों का प्रासंगिक प्रयोग किया है, जिससे प्रभावोत्पादकता सहज ही नज़र आती है।

जैसे - "रस्सी जल गई मगर बल नहीं गए", "दो टके की टिचरी"[59], "जीते जी मारना", "पूरा काला नाग"[60], "नाम की माला जपना", "साँट-गाँठ चलना"[61] आदि।

नि ष्क र्ष

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि -

1. दीप्ति खण्डेलवाल ने विवेच्य उपन्यासों में कथ्य के साथ-ही-साथ अभिव्यक्ति की विभिन्न प्रणालियों को स्थान दिया है।

2. लेखिका ने मुख्यतया वर्णनात्मक, मनोवैज्ञानिक, कथोपकथनात्मक प्रणालियों को इसतरह शब्दबद्ध किया है कि पाठक परिवर्तित जीवन-मूल्यों को आसानी से समझ सकता है और प्रभावित भी हो उठता है।

3. उपन्यासों में पात्रों के चरित्र-चित्रण में मनोवैज्ञानिक शैली का जो प्रयोग किया गया है वह परिवर्तित जीवन-मूल्यों के प्रकटीकरण के दृष्टि से लाजवाब हैं।

4· कथोपकथन की नाटकीय शैली का प्रयोग भी प्रासंगिक और प्रभावशाली है।

5· पत्रात्मक प्रणाली का प्रयोग केवल विवेच्य उपन्यासों में किया गया है, पर उसकी महत्ता निर्विवाद है।

6· लेखिका ने भाषाशैली में तत्सम, तद्भव शब्दों के साथ ही साथ विदेशी शब्दों का भी प्रयोग किया है और कहावतों और मुहावरों से उनकी भाषा सजीव सजी-धजी है।

7· संक्षेप में कथ्य और शैली का सुन्दर समन्वय उनके विवेच्य उपन्यासों की महत्वपूर्ण उपलब्धि है।

संदर्भ-ग्रंथ-सूची

1· साहित्यशास्त्र - रामकुमार वर्मा, प्र·सं·1968, पृ·132

2· प्रिया - दीप्ति खण्डेलवाल, सं·1976, पृ·24

3· वही, पृ·13

4· कोहरे - दीप्ति खण्डेलवाल, सं·1977, पृ·10

5· प्रतिध्वनियाँ - सं·1978, पृ·37-38

6· प्रिया - दीप्ति खण्डेलवाल, सं·1976, पृ·23

7· कोहरे - दीप्ति खण्डेलवाल, सं·1977 पृ· 75

8· वही, पृ·41

9· वही, पृ·56

10· प्रतिध्वनियाँ - दीप्ति खण्डेलवाल, सं·1978, पृ·10-11

11· प्रिया - दीप्ति खण्डेलवाल, सं·1976, पृ·126

12· वही, पृ·151

13· कोहरे - दीप्ति खण्डेलवाल, सं·1977 पृ·60

14· प्रतिध्वनियाँ - दीप्ति खण्डेलवाल, सं·1978, पृ·15

15· प्रिया - दीप्ति खण्डेलवाल, सं·1976, पृ·52

16· कोहरे - दीप्ति खण्डेलवाल, सं·1977, पृ·69-70

17· प्रतिध्वनियाँ - दीप्ति खण्डेलवाल, सं·1978, पृ·105

18· प्रिया - दीप्ति खण्डेलवाल, सं·1976, पृ·128

19· कोहरे - दीप्ति खण्डेलवाल, सं·1977 पृ·22

20· प्रतिध्वनियाँ - दीप्ति खण्डेलवाल, सं·1978, पृ·12

21· प्रिया - दीप्ति खण्डेलवाल, सं·1976, पृ·73

22· कोहरे - दीप्ति खण्डेलवाल, सं·1977, पृ·23

23· प्रतिध्वनियाँ - दीप्ति खण्डेलवाल, सं·1978, पृ·100

24· प्रिया - दीप्ति खण्डेलवाल, सं·1976, पृ·151-152

25· कोहरे - दीप्ति खण्डेलवाल, सं·1977, पृ·95

26· प्रतिध्वनियाँ - दीप्ति खण्डेलवाल, सं·1978 पृ·25

27· प्रिया - दीप्ति खण्डेलवाल, सं·1976, पृ·121

28· वही, पृ·129

29· कोहरे - दीप्ति खण्डेलवाल, सं·1977, पृ·51-52

30· प्रतिध्वनियाँ - दीप्ति खण्डेलवाल, सं·1978, पृ·48

31· प्रिया - दीप्ति खण्डेलवाल, सं·1976 पृ·18

32· वही, पृ·36-37

33· वही, पृ·129

34· कोहरे - दीप्ति खण्डेलवाल, सं·1977, पृ·9

35· वही, पृ·17

36· प्रतिध्वनियाँ - दीप्ति खण्डेलवाल, सं·1978, पृ·24

37· वही, पृ·69

38· वही, पृ·70

39· वही, पृ·39

40· प्रिया - दीप्ति खण्डेलवाल, सं·1976, पृ·113

41· कोहरे - दीप्ति खण्डेलवाल, सं·1977, पृ·15

42· प्रिया - दीप्ति खण्डेलवाल, सं·1976, पृ·8

43· वही, पृ·128

44· वही, पृ·115

45· कोहरे - दीप्ति खण्डेलवाल, सं·1977, पृ·16

46· वही, पृ·33

47· वही, पृ·63

48· वही, पृ·19-20

49· प्रतिध्वनियाँ - दीप्ति खण्डेलवाल, सं·1978, पृ·62

50· प्रिया - दीप्ति खण्डेलवाल, सं·1976, पृ·7

51· वही, पृ·23

52· कोहरे - दीप्ति खण्डेलवाल, सं·1977, पृ·11

53· प्रतिध्वनियाँ - दीप्ति खण्डेलवाल, सं·1978 पृ·7

54· प्रिया - दीप्ति खण्डेलवाल, सं·1976, पृ·94

55· वही, पृ·9-10

56· वही, पृ·11

57· कोहरे - दीप्ति खण्डेलवाल, सं·1977, पृ·11

58· प्रतिध्वनियाँ - दीप्ति खण्डेलवाल, सं·1978, पृ·9

59· प्रिया - दीप्ति खण्डेलवाल, सं·1976, पृ·107

60· वही, पृ·115

61· प्रतिध्वनियाँ - दीप्ति खण्डेलवाल, सं·1978, पृ·29